

संवेदनशील समाज के निर्माण में संस्कृत साहित्य की भूमिका

Dr. Sanjeev Kumar Jha*

Assistant Teacher, +2 Sarvodaya High School Gangasagar, Darbhanga, Bihar

सार – साहित्य समाज का दर्पण है। समाज में जो भी घटित होता है वह साहित्य में प्रतिबिम्बित होता है। कवि की अनुभूति ही काव्य रूप में अभिव्यक्ति पाती है। यह अभिव्यक्ति किसी भी भाषा में हो सकती है। भाषा केवल माध्यम है। भाव ही मुख्य है, परन्तु यह प्रमाणित है कि संसार की समस्त कृतियों में ऋग्वेद प्रथम कृति है। इससे यह भी प्रमाणित हो जाता है कि संस्कृत भाषा प्राचीनतम भाषा है। अतः संसार का प्राचीनतम ज्ञान-विज्ञानकोष इसमें निहित है।

संस्कृत साहित्य भारतीय समाज के उत्कृष्ट जीवनमूल्यों, जीवन दर्शन, आध्यात्मिकता, सांस्कृतिक एवं सामाजिक परम्पराओं का प्रतिबिम्ब है। संस्कृत साहित्य भारतीय संस्कृति का संवाहक भी है। लगभग 3000 वर्ष पहले वैश्विक धरातल पर जब अपने विचार को अभिव्यक्ति प्रदान करने का प्रारंभिक प्रयास चल रहा था, उस समय भारतभूमि पर वाग्देवी अपने सम्पूर्ण एवं उत्कृष्ट रूप में ऋग्वेद के सूत्रों के रूप में अवतरित हो चुकी थी। तब से अनवरत संस्कृत साहित्य सरिता अविरल एवं सहज गति से प्रवाहमान है। धर्म, अर्थ, काम, एवं मोक्ष जैसे पुरुषार्थों की परिकल्पना कर उसे व्याख्यायित करने वाली, ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वाणप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम के रूप में जीवन को एवं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र के रूप में समाज को व्यवस्था एवं संतुलन प्रदान करने वाली, सोलह संस्कारों, तीन ऋणों, पंच महायज्ञों एवं गुरुकुल शिक्षा से जीवन को परिमार्जित करने वाली तथा अपने आध्यात्मिक जीवन दर्शन से आत्मकल्याण का मार्ग प्रशस्त करने वाली भारतीय संस्कृति का सम्पूर्ण दर्शन है संस्कृत साहित्य। संस्कृत साहित्य में जीवन के श्रेय एवं प्रेय दोनों पक्षों का सामंजस्य है। भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता के उत्तरोत्तर विकास की सम्पूर्ण झांकी है संस्कृत साहित्य। संस्कृत साहित्य में मनुष्य के कर्तव्यों की विशद व्याख्या की गई है। गीता जैसी अमृत वाणी संस्कृत में ही है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का नारा संस्कृत साहित्य का ही अवदान है। इस प्रकार संस्कृत साहित्य में मनुष्य की ही नहीं पशु-पक्षी एवं पेड़-पौधों को संरक्षण की भी चिंता की गई है। जीव हत्या नहीं करना है। किसी का अहित करना तो दूर की बात सोचने तक की मनाही है। अतः संवेदनशील समाज के निर्माण में संस्कृत साहित्य की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु – प्रतिबिम्बित, अभिव्यक्ति, अनुभूति, ऋग्वेद, जीवनदर्शन, आध्यात्मिकता, आत्मकल्याण।

----- X -----

प्रस्तावना:

संस्कृत भाषा में निबद्ध साहित्यमें एकता के सूत्र प्राप्त होते हैं। यह सूत्र सामाजिक एकता एवं समरसता का मूलाधार है। देश में अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं। इन भाषाओं की जननी संस्कृत ही है। संस्कृत ही सभी भाषाओं को बांधकर रखी है। यह समाज को जोड़ने वाली भाषा है। सूत्र ग्रंथों और स्मृतियों ने समाजवाद की अवधारणा को जन्म दिया। सामाजिक व्यवस्थाओं के सफल संचालन हेतु अनेक संस्थाओं का विशद वर्णन संस्कृत साहित्य में उपलब्ध है। विवाह, परिवार आदि संस्थाएँ उनके

उत्तरदायित्व एवं मर्यादाओं की स्थापना संस्कृत साहित्य मेंजिस तरह से उल्लिखित हैं वह अत्यन्त दुर्लभ हैं। आज पूरा विश्व संस्कृत साहित्य के उदात्त संदेशों को ग्रहण कर रहा है।

अनेक साहित्यिक रचनाएँ भी समय-समय पर लिखी गईं जिससे तत्कालीन सामाजिक गतिविधियाँ उद्घाटित होती हैं। संस्कृत के महान कवि कालिदास के कुमार संभव, शाकुंतलम्, मालविकाग्नि मित्र जैसे ग्रंथों से गुप्त कालीन समाज और धर्म का ज्ञान प्राप्त होता है। भास, हर्ष, शूद्रक आदि संस्कृत के अनेक ऐसे लेखक व साहित्यकार हुए हैं

जिनके ग्रंथों व साहित्यों में तत्कालीन समाज का चित्रण हुआ है। हर्ष की 'रत्नावली', 'नागानंद' और प्रियदर्शिका उल्लेखनीय हैं। शूद्रकृत मृच्छकटिका तदयुगीन समाज का विस्तृत चित्र सम्मुख रखता है। विशात्वदत्तकृत 'मुद्राराक्षस' और देवी चन्द्रगुप्तम् ऐसी साहित्यिक रचनाएँ हैं, जो इतिहास को भी स्पर्श करती हैं। इनके अतिरिक्त अनेक कथा-ग्रन्थ भी लिखे गए जिनसे सामाजिक और धार्मिक दशा का चित्रण होता है। गुणाद्य कृत 'बृहत् कथा' का उल्लेख अनेक लेखकों ने किया है, किन्तु यह ग्रंथ अनुपलब्ध है। बुद्ध स्वामी की 'बृहत् कथा' क्षेमेन्द्र की 'बृहत्कथामंजरी' और सोमदेव की कथासरित्सागर नामक कृतियाँ भारत के उत्तर प्राचीन समाज और संस्कृति को विवृत करती हैं। दक्षिण के तमिल साहित्य से दक्षिण का सामाजिक इतिहास व्यक्त होता है। मणिमेखलै, शिल्पपदिकारम्, तिरक्कुरलम्, नन्दिम्कालम्बकम् आदि ऐसे ही प्रसिद्ध ग्रंथ हैं। जीवनचिन्तामणि में कवि तिरुत्तक्कदेवर ने राजनीतिक घटनाओं के साथ-साथ सामाजिक और धार्मिक जीवन को भीचित्रित किया है।[1]

स्मृतिकारों ने सूत्र साहित्य में वर्णित विषयों का विस्तार पूर्वक समयानुकूल श्लोकबद्ध विवेचन किया है। व्यक्तिगत तथा सामूहिक आचार व्यवहार का वर्णन गृह सूत्रों एवं धर्मसूत्रों में किया गया है। संस्कृत साहित्य में जिन सामाजिक आदर्शों, नियमों का निदर्शन प्राप्त होता है, वे ऋषियों द्वारा शताब्दियों के चिंतन मनन तथा अध्ययन का परिणाम हैं। चतुर्विध पुरुषार्थ की अवधारणा संस्कृत साहित्य से ही प्राप्त होती है। वर्ण व्यवस्था, आश्रम व्यवस्था की परिकल्पना एवं विस्तार संस्कृत साहित्य की ही देन है। मानव समाज को परिष्कृत एवं सुसंस्कृत बनाने हेतु गर्भकाल से लेकर मृत्यु पर्यन्त सोलह प्रकार के संस्कारों का वर्णन संस्कृत साहित्यों में विस्तार से किया गया है। जिसका पालन कर लोग आदर्श समाज की स्थापना कर सकते हैं।

संस्कृत साहित्य में व्यक्त है कि परोपकार मानवीय गुण समाज के लिए शांति एवं सुख देता है। परोपकार में त्याग की भावना विद्यमान रहती है। इस गुण के कारण मुन्य अपना संचित धन, अपना समय, दूसरों की सेवा-सुश्रुषा तथा सहायता में लगाता है। उपकृत व्यक्ति उपकारी का ऋणी हो जाता है। परोपकार से न केवल व्यक्ति का भला होता है, अपितु निरर्थक प्रतिद्वन्द्विता, ईष्या-मात्सर्य से छुटकारा मिलता है तथा पारस्परिक सौहार्द बढ़ता है। परस्पर स्नेही लोग जीवन की सरसता का अनुभव करते हैं।[2]

संस्कृत साहित्य में त्याग की अनेक गाथाएँ विद्यमान हैं। भगवान श्रीराम ने पिता द्वारा प्रदत्त राज्य को त्याग कर

वनवास ले लिया था। अशांति एवं पारस्परिक कलह को दूर करने का सबसे अच्छा माध्यम त्याग है। त्याग से स्वार्थपरता में कमी आती है। आत्मा में संतोष बढ़ता है। पारस्परिक स्नेह बढ़ता है। दूसरे का क्रोध भी शांत होता है। त्याग-भावना से समाज में दुःखकारक अन्याय-अत्याचार कर नहीं सकते। संस्कृत साहित्य में त्याग को एक मानव-मूल्य के रूप में स्वीकार किया गया है।

संस्कृत साहित्य में अहिंसा को बड़ी गहराई से अंकित किया गया है। सामान्यतया किसी को न मारना अहिंसा है। परंतु, हम जानते हैं कि किसी भी प्राणी को मन से, वाणी से तथा कर्म से किसी प्रकार की चोट न पहुँचाना अहिंसा है। यदि अहिंसा धर्म का पालन मानव-समाज द्वारा किया जाए, तो संसार में व्याप्त मार-काट आदि विसंगतियों से छुटकारा पाया जा सकता है।

संस्कृत साहित्य आचरणात्मक एवं आदर्शपूर्ण मानव मूल्यों के लिये एक अनुपम वैश्विक धरोहर है, जो शताब्दियों से अजश्र धारावत प्लावित सामाजिक जीवन में अपनी असीम गरिमा और अनन्त प्रासंगिकताको सिद्ध करते आ रहे हैं। भारतीय धरातल पर प्रणीत वेद वाङ्मय ही धरती पर मानव मूल्यों की सुदृढ़ आधारभिला रख चुका है, जिसके आधार पर हमारी भव्य संस्कृति की अट्टालिका अपनी पूर्ण गरिमा के साथ खड़ी है।[3] मानव को कदाचित जब अपनी अस्मिता का बोध हुआ होगा, तब ही से उसने मूल्यों की परिकल्पना और उनका आचरण आरंभ कर दिया होगा। चारों वेद और एक सौ आठ उपनिषद् मानव को अपने गंतव्य की ओर इस तत्परता के साथ अग्रसर होने की प्रेरणा देते हैं कि उससे कहीं भी कोई त्रुटि न हो जाय। कहना होगा कि मानव के लिये आचरणात्मक और अनाचरणीय जैसे सभी तत्त्वों का वेद वाङ्मय ने विस्तार से वर्णन किया है, जिन्हें हम आज मूल्यों की संज्ञा से अभिहित कर रहे हैं।[4]

भारतवर्ष में सांसारिक जीवन के उपकरणों को सौलभ्य होने के कारण भारतीय समाज जीवन संग्राम के विकट संघर्ष से अपने को अलग रखकर आनन्द की अनुभूति की उपलब्धि को अपना लक्ष्य मानता है। इसीलिए संस्कृत साहित्य जीवन की विशम परिस्थितियों के भीतर से आनन्द की खोज में सदा संलग्न रहता है। संस्कृत साहित्य भारत देश का नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व के जनमानस कल्याण के लिए संकल्पित है। संस्कृत साहित्य के अनुसार समस्त प्राणियों में एक ही आत्मा के विराजमान होने के कारण सब में समानता मानी गयी है। एतदर्थ मानवमात्र को परस्पर भाई-बन्धु के समान रहने की शिक्षा दी गयी है, साथ ही इस शिक्षा को जीवन में प्रायोगिक एवं जीवन रूप देने के लिए अहिंसा, करुणा, प्रेम,

समता, सहानुभूति, सहिष्णुता, सहृदय, सहयोग, समन्वय आदि सत्कृत्यों के पालन करने पर जोर दिया गया है।[5]

“हितेन सह इति सहितस्य भावः साहित्यम्।”

यह वाक्य संस्कृत का एक प्रसिद्ध सूत्र वाक्य है जिसका अर्थ होता है साहित्य का मूल तत्त्व सबका हित साधन है। मानव अपने मन में उठने वाले भावों को जब लेखनीबद्ध कर भाषा के माध्यम से प्रकट करने लगता है तो वह रचनात्मक ज्ञानवर्धक अभिव्यक्ति के रूप में साहित्य कहलाता है। साहित्य का समाज दर्शन शूल-कांटों जैसी परम्पराओं और व्यवस्था के शोषण रूप का समर्थन करने वाले धार्मिक नैतिक मूल्यों के बहिष्कार से भरा पड़ा है। जीवन और साहित्य की प्रेरणाएँ समान होती हैं। समाज और साहित्य में अन्योन्याश्रित संबंध होता है। साहित्य की पारदर्शिता समाज के नवनिर्माण में सहायक होती है जो खामियाँ को उजागर करने के साथ उनका समाधान भी प्रस्तुत करती है। समाज के यथार्थवादी चित्रण समाज सुधार का चित्रण और समाज के नवनिर्माण का कार्य करता है।

साहित्य समाज की उन्नति और विकास की आधार शिला रखता है इस संदर्भ में अमीर खुसरो से लेकर तुलसी, कबीर, जायसी, रहीम, प्रेमचंद, भारतेन्दु, निराला, नागार्जुन तक की शृंखला के रचनाकारों ने समाज के नवनिर्माण में अभूतपूर्व योगदान दिया है। व्यक्तिगत हानि उठाकर भी उन्होंने शासकीय मान्यताओं के खिलाफ जाकर समाज के निर्माण हेतु कदम उठाए। कभी-कभी लेखक समाज के शोषित वर्ग के इतना करीब होता है कि उसके कष्टों को वह स्वयं भी अनुभव करने लगता है। तुलसी, कबीर, रैदास आदि ने अपने व्यक्तिगत अनुभवों का समाजीकरण किया था जिससे आगे चलकर उन्होंने अविकसित वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में समाज में स्थान पाया। मुंशी प्रेमचंद के एक कथन को यहाँ उद्धृत करना उचित प्रतीत होता है - 'जो दलित है, पीड़ित है, संत्रस्त है, उसकी साहित्य के माध्यम से हिमायत करना साहित्यकार का नैतिक दायित्व है।'

संस्कृत साहित्य हो या हिन्दी-साहित्य दोनों ही साहित्यों ने समाज जागरण के लिए अपनी पुरातन संस्कृति को निष्ठा के साथ स्मरण किया है, तो कभी तात्कालीन स्थितियों पर गहराई के साथ चिन्ता भी अभिव्यक्त की है। साहित्य मानव को श्रेष्ठ बनाने का संकल्प लेकर चला है। व्यापक मानवीय एवं राष्ट्रीय हित इसमें निहित है। हाल के दिनों में संचार साधनों के प्रसार और सोशल मीडिया के माध्यम से साहित्यिक अभिवृत्तियाँ समाज के नवनिर्माण में अपना योगदान अधिक सशक्तता से

दे रही है। हालांकि बाजारवादी प्रवृत्तियों के कारण साहित्यिक मूल्यों में गिरावट आई है परन्तु अभी भी स्थिति नियंत्रण में है।

निष्कर्षः

संस्कृत-साहित्य की यह एक अनोखी विशेषता है कि यह मानवता के कल्याण की भावना को अग्रसर करता है। वेद की शुरुआत ही समस्त मानवों के कल्याण के संकल्प के साथ होती है, 'अग्निमीहे पुरोहितम्' इसका भावार्थ यह है कि समस्त मानवों का कल्याण करने वाले अग्नि की स्तुति करता हूँ। वैदिक ऋषि विश्व समाज कल्याण के लिए सुमति और सद्भावना की प्रार्थना करता है, "विदधातीति हितम्।"

हम पाते हैं कि साहित्य वह सषक्त माध्यम है, जो समाज को व्यापक रूप से प्रभावित करता है। यह समाज में प्रबोधन की प्रक्रिया का सूत्रपात करता है। यह समाज को प्रेरित करने का कार्य करता है और जहाँ एक ओर यह सत्य है सुखद परिणामों को रेखांकित करता है, वहीं असत्य का दुखद अंत कर सीख व शिक्षा प्रदान करता है। अच्छा साहित्य व्यक्ति और उसके चरित्र निर्माण में भी सहायक होता है। यही कारण है कि समाज के नवनिर्माण में साहित्य की केन्द्रीय भूमिका होती है। इससे समाज को दिशा बोध होता है और साथ ही उसका नवनिर्माण भी होता है। साहित्य समाज को संस्कारित करने के साथ-साथ जीवन मूल्यों की भी शिक्षा देता है। इस प्रकार साहित्य अतीत से प्रेरणा लेता है, वर्तमान को चित्रित करने का कार्य करता है और भविष्य का मार्गदर्शन करता है। इसलिए साहित्य को समाज का दर्पण भी माना जाता है।

संदर्भः

1. मिश्र, जयशंकर, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, 2006, पृ.-5-6
2. चैधरी, रामविलास, संस्कृत साहित्य का समालोचनात्मक इतिहास, मोतीलाल बनारसी दास, नई दिल्ली, 1991, पृ.-167
3. कवठेकर, प्रभाकर नारायण, संस्कृत साहित्य में नीतिकथा का उद्भव एवं विकास, चैखम्बा, वाराणसी, 1981, पृ.-202

4. उपाध्याय, बलदेव, आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास, सप्तम खण्ड, चैखम्बा, वाराणसी 1976, पृ.-613
5. शुक्ल, हीरालाल, आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास, चैखम्बा, वाराणसी, 1978, पृ.-70

Corresponding Author

Dr. Sanjeev Kumar Jha*

Assistant Teacher, +2 Sarvoday High School
Gangasagar, Darbhanga, Bihar